वर्ष 42 अंक : 3 3.5.2019 शुक्रवार (मई-जून) वार्षिक शुल्क : ₹ 111.00

भगवत् कृपा

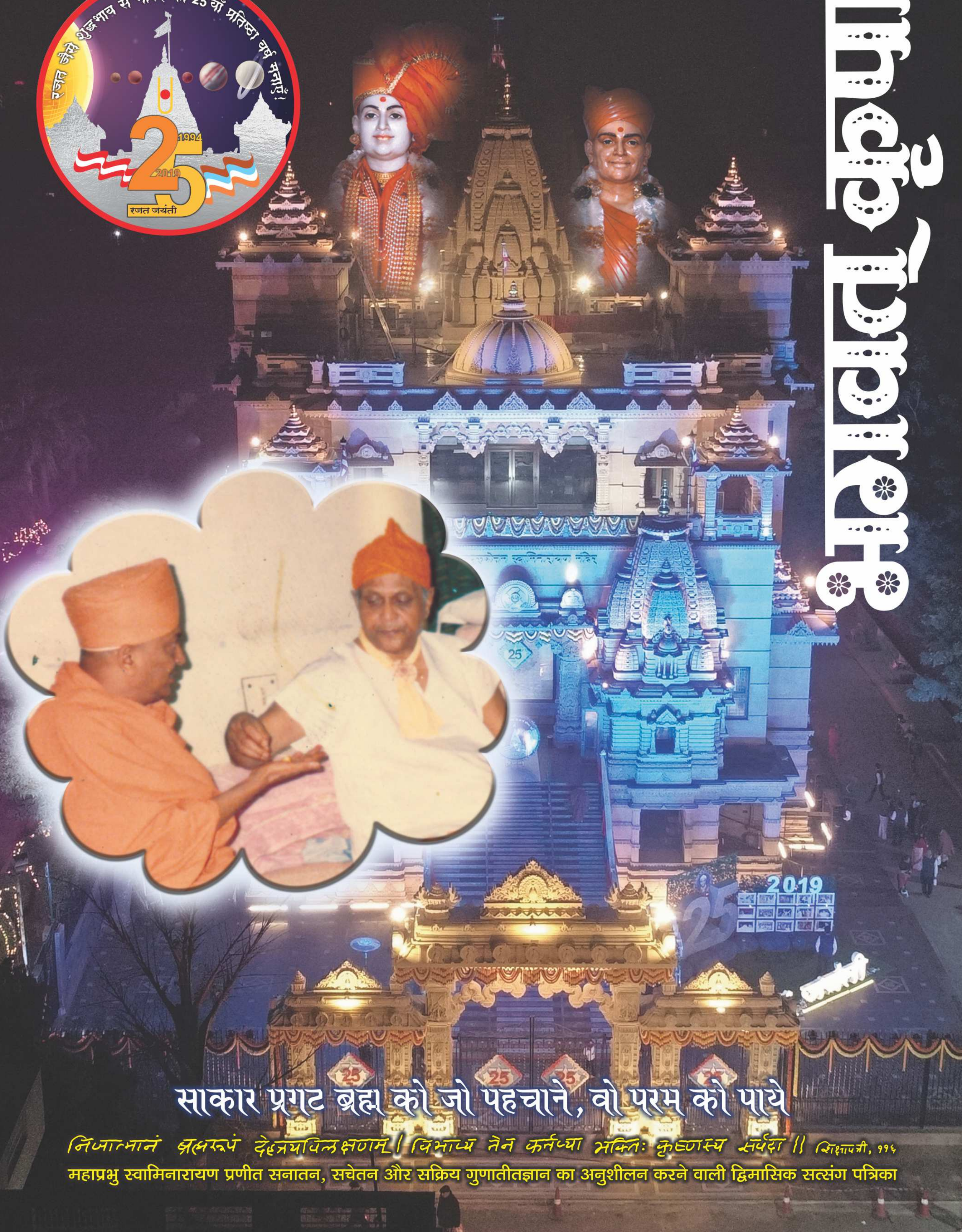

साकार प्रगट ब्रह्म को जो पहचाने, वो परम को पाये

निजात्मानं ब्रह्मरूपं देहत्रयविलक्षणम्। विभाव्य तेन कर्तव्या भक्तिः कृष्णस्य सर्वदा ॥ शिक्षापत्री, ११६

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली द्विमासिक सत्संग पत्रिका

भगवान के भव्य स्वरूपों के प्राकट्य पर्व पर...

मई महीने का नाम लेते ही सभी मुक्तों को **'अनुष्ठान शिविर'** का तो चिंतन होने ही लगता है, परंतु साथ ही विशेष बात यह है कि –

वैशाख कृष्णा 12 को **ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज की प्राकट्य तिथि**

व

प.पू. गुरुजी की भागवती दीक्षा तिथि

एवं

23 तारीख को **ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज व प्रगट ब्रह्मस्वरूप हरिप्रसादस्वामीजी का प्राकट्य दिन** आता है।

प्रार्थना करने हेतु हम सभी के लिए यह सुअवसर हैं। जिन्होंने गुजरात की धरती पर प्रगट होकर लाखों मुक्तों को प्रभुप्रेम में सराबोर करके जीवन का सच्चा मर्म समझाया है, ऐसे परम भागवत संत **ब्रह्मस्वरूप प.पू. योगीजी महाराज** तो स्वयं –

* पुरुषोत्तम नारायण के प्रगट स्वरूप थे!
* वचनामृत में श्रीजी महाराज द्वारा बताए वड़वानल अग्नि जैसे सच्चे संत थे!
* भागीरथी के समान परम पावन थे, जो अपनी पवित्रता से संबंध वालों को पवित्र बनाते थे!
* सूर्य की भाँति सभी का अकारण ही भला करने वाले साधु थे!
* अति समर्थ होते हुए आजीवन प्रभु का सच्चा सेवक और भक्तों के गुलाम बन कर रहे!
* प्रभु का चलता-फिरता मंदिर और सच्चा 'चैतन्यधाम' थे!
* सभी आश्रितों और युवकों के जीवनप्राण थे!
* सभी की प्रेरणामूर्ति, निराधारों का आधार और हरेक के वे अपने थे। लेकिन मूलतः तो वे गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज के ज़रिए केवल अक्षरपुरुषोत्तम महाराज से ही जुड़े हुए थे!

और... स्वयं पारस होते हुए उन्होंने गुरुहरि काकाजी महाराज द्वारा प.पू. गुरुजी को पारस बना कर, हम पर जो उपकार किया, उसके लिए उनका जितना धन्यवाद करें उतना कम है। ये विभूतियाँ यदि हमारे जीवन में नहीं होतीं, तो एक सामान्य मनुष्य की भाँति ही हम सभी काल, कर्म और माया के अधीन जीवन जी रहे होते और आज जो एक निश्चिंतता, निर्भयता और शांति का एहसास होता है या मानव से महामानव की योनि में कदम बढ़ाने में हमारा नंबर लग गया है, वह सिर्फ कल्पना ही रहती।

तो आइए, ऐसे मंगल अवसर पर 'श्री अक्षरपुरुषोत्तम सत्संग पत्रिका' में वर्षों पूर्व निहित **ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज** के आशीर्वाद और **गुरुहरि काकाजी महाराज एवं प्रगट ब्रह्मस्वरूप हरिप्रसादस्वामीजी** के बीच हुई गोष्ठी द्वारा दिव्य जीवन जीने की कला सीखने हेतु तत्पर हों...

वचनामृत में कई जगह लिखा है – *सत्पुरुष के गुण मुमुक्षु में आते हैं।*

तो, ऐसी क्या कमी रह जाती है, जो ये गुण नहीं आते ?

इसका उत्तर यह है कि –

सत्पुरुष के साथ में रहते हुए भी सेवक/ साधक निर्दोषबुद्धियुक्त नहीं रहता होगा। राजा का नौकर उसके साथ बहुत रहता हो, सेठ का नौकर सेठ के साथ रहता हो; पर वह सेठ में दोष देखता रहता हो कि सेठ को इतना भी करना नहीं आता, इनमें तो बुद्धि ही नहीं है, ऐसा है - वैसा है। सिर्फ पेट भरने के लिए यदि जी हज़ूरी करता हो, तो उसमें गुण कैसे आएँगे ? सेठ के गुण आएँगे क्या ?

अतः सत्पुरुष के साथ रहना, तो **'निर्दोषबुद्धि'** से रहना। सेवा करनी तो **'निर्दोषबुद्धि'** से करनी, परंतु फल की इच्छा से नहीं कि मैं इतनी सेवा करता हूँ, तो इतना मुझे मिलना चाहिए। ऐसे भाव व इच्छा से नहीं। सकामभाव से नहीं, बल्कि निष्कामभाव से। दरअसल, **अक्षरधाम की प्राप्ति हो यह भाव इसमें समाया है।** यह भाव रखना। सो सत्पुरुष के साथ किस प्रकार से रहना चाहिए ? उत्तर है – अखंड **'निर्दोषबुद्धि'** से। सेवा करनी वह भी **'निर्दोषबुद्धि'** से। वे जैसा कहें वैसा **'निर्दोषबुद्धि'** से करेंगे, तो उनके गुण आएँगे।

और... फिर मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामीजी ने क्या कहा है ? *सत्पुरुष को सर्वज्ञ जानना।* सर्वज्ञ किस प्रकार ? खाते - पीते ऐसे सामान्य संत जानना, ऐसा कहा क्या ? नहीं, सर्वज्ञ जानना – सब कुछ जानने वाले। सर्वज्ञ जानने के बाद हमें क्या करना चाहिए ? उनके साथ थोड़ा - सा अंतराय रखना चाहिए क्या ? अरे ! थोड़ा-बहुत जो अंतराय हो, उसे निकाल देना चाहिए। तब हम में सत्पुरुष के गुण सहज आ जाएँगे। **लाखों गाँव दूर रहेंगे, तब भी गुण आते हैं।** सो, **'निर्दोषबुद्धि'** जैसी कोई भी सेवा नहीं है। **मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामीजी** कहते –

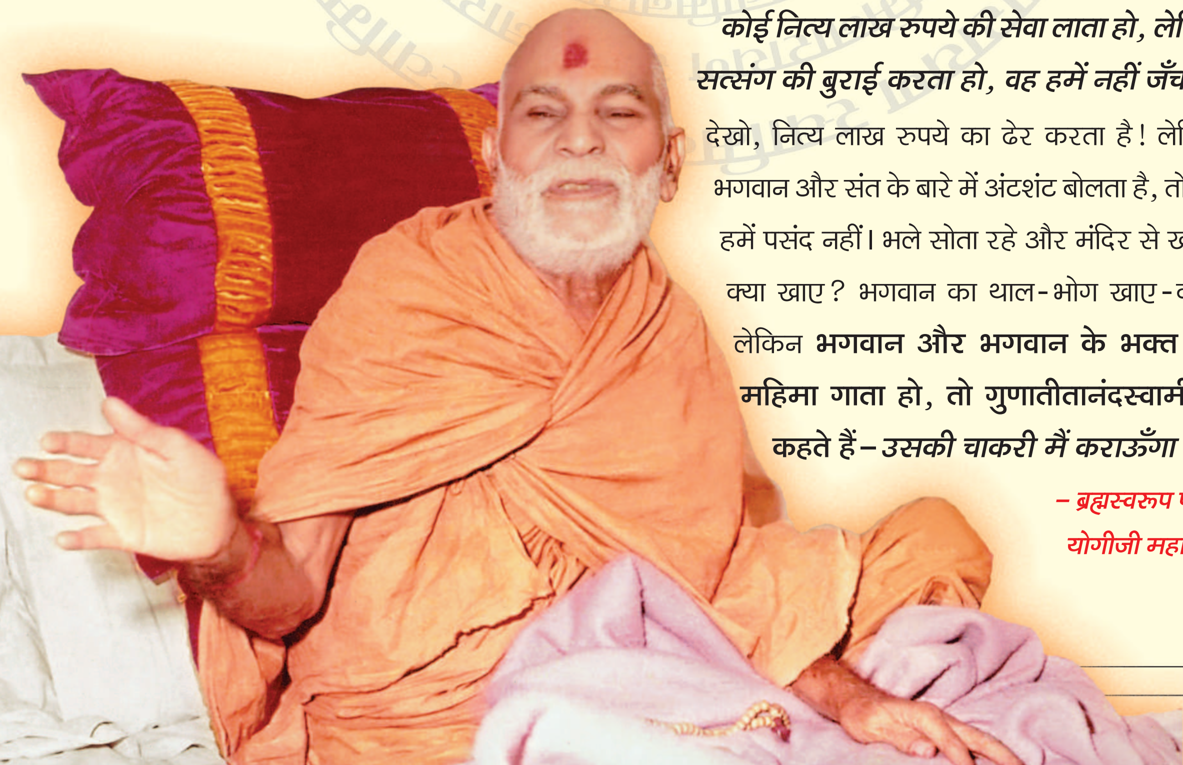

कोई नित्य लाख रुपये की सेवा लाता हो, लेकिन सत्संग की बुराई करता हो, वह हमें नहीं जँचता। देखो, नित्य लाख रुपये का ढेर करता है ! लेकिन भगवान और संत के बारे में अंटशंट बोलता है, तो वह हमें पसंद नहीं। भले सोता रहे और मंदिर से खाए; क्या खाए ? भगवान का थाल - भोग खाए - करे, लेकिन **भगवान और भगवान के भक्त की महिमा गाता हो, तो गुणातीतानंदस्वामीजी कहते हैं – *उसकी चाकरी मैं कराऊँगा।***

– ब्रह्मस्वरूप प.पू. योगीजी महाराज

जीवों को नवधा भक्ति में से पराभक्ति में ले जाकर, जीवदशा में से ब्रह्मरूप करने के लिए श्रीजी महाराज ने अनंत प्रकार के क्रियायोग शुरू किए। यदि सच्ची भक्तिरूप क्रिया न हो, तो संपूर्ण फल मिलता ही नहीं। वचनामृत और स्वामी की बातों के अनुसार कोई भी कर्म यदि–

(1) प्रगट स्वरूप की स्मृति सहित,

(2) सिर्फ उनकी प्रसन्नता के लिए और

(3) प्रगट स्वरूप या उनके किसी लाड़ले एकांतिक के वचन से हो, तभी वह कर्म सत्कर्म भक्तिरूप-ज्ञानरूप और **'नैष्कर्म्य'** कहलाता है। यही सत्कर्म जीव का परिवर्तन करता है। जीव को शिव बनाता है। तभी स्वामी की बात प्र.2 की 57 में स्वामी ने कहा कि संत जैसा कहें वैसा करना श्रेष्ठ है, निर्गुण है और... संत की प्रसन्नता पाने की भावना के बिना, मनमानी रीति से किए कर्म को सगुण, बंधनरूप और कनिष्ठ कह दिया।

श्रीजी महाराज के समय में कई सिद्ध पुरुष थे; परंतु पराभक्तिरूप **'नैष्कर्म्य कर्म'** की खोट के कारण वे **भगवान की माला के मनके में** नहीं आ सके और अंतर की प्रसन्नता प्राप्त नहीं कर सके।

शायद कोई मुक्त स्वरूप की स्मृति सहित वर्ते, आज्ञा के अनुसार वर्ते, लेकिन यदि अपनी रुचि-अपने ढंग के मुताबिक, अपनी रीति एवं अहम् की किसी वृत्ति का पोषण करने के लिए, यदि क्रिया हो जाए, तो वह कर्म गुणात्मक हो जाता है। इसी कारण अंतर की प्रसन्नता नहीं मिलती। राधिकाजी जैसे कई मुक्त थे, जो कि स्मृति सहित और आज्ञा में रहने के बावजूद भी, केवल भगवान की प्रसन्नता के लिए, उनकी मरज़ी के अनुसार वर्त न सके। फलस्वरूप जब मूल प्रकृति के विरुद्ध वर्तना पड़ा, तो अपनी प्रकृति हावी हो गयी। अर्जुन को भी भगवान के विराट स्वरूप का दर्शन करने के बाद ही पराभक्ति रूप कर्म का ख्याल आया है।

कर्तापन और भोक्तापन जब तक माना जाता है, तब तक सच्चा सत्कर्म होता नहीं। सच्चे सत्कर्म में, प्रगट स्वरूप ही केवल माध्यम होने के कारण, अहम् वृत्ति का निरंतर अभाव ही रहता है। परिणाम स्वरूप सच्चे सत्कर्म से प्रसन्नता, प्रफुल्लता, अहोहोभाव, कृतार्थता, एकात्मता और सुहृदयता का अनुभव होता है और अंततः

प्रगट स्वरूप के अंतर की प्रसन्नता प्राप्त होने पर
जीव शिवरूप हो जाता है।

गुरुचरणों में अखंड निमग्न रह कर, संपूर्ण
समर्पित होकर दिव्य जीवन जिया जाए, इस हेतु
गुरुहरि अखंड बल दें...

– गुरुहरि काकाजी महाराज

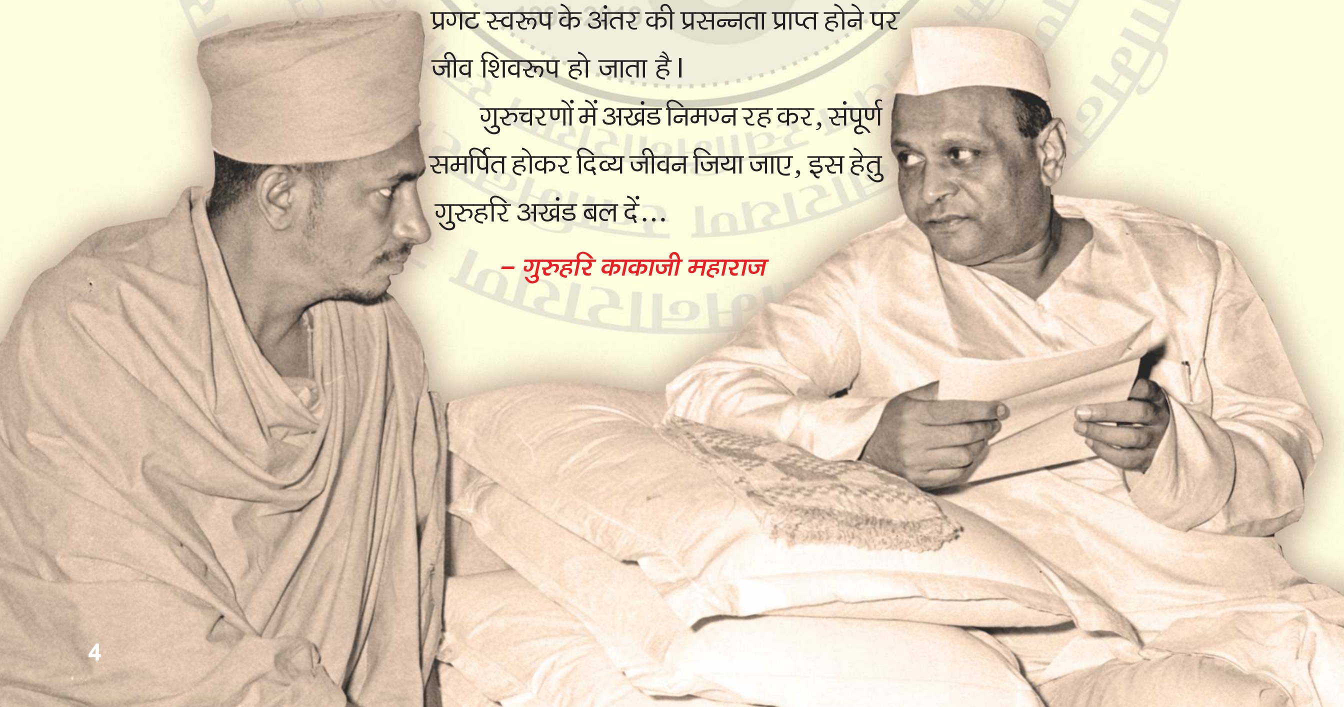

योगीबापा को करोड़ों धन्यवाद, काकाजी हमें भेंट दिए...

- जिन्होंने अपने जीवन का प्रत्येक क्षण ब्रह्मस्वरूप प.पू. योगीजी महाराज एवं उनके संतों-हरिभक्तों को राज़ी करने हेतु ही न्यौच्छावर कर दिया...
- ब्रह्मस्वरूप प.पू. योगीजी महाराज के संबंध वालों को ही जिन्होंने अपनी दुनिया माना...
- ब्रह्मस्वरूप प.पू. योगीजी महाराज के पास जो खूब सरल वर्ते...
- अत्यंत बुद्धिशाली होने के बावजूद, केवल गुरुचरणों में निमग्न होकर,
  उनकी 'हाँ से हाँ' करने को ही जिन्होंने अपनी जीवनशैली बनाया...
- अपने आश्रितों के आध्यात्मिक विकास और उन्हें प्रभु की मूर्ति का सुख प्राप्त कराने के लिए प्रभुधारक प्रगट संत की पहचान करवा कर, संत के अंतर की प्रसन्नता पाने की जिन्होंने नित्य नवीन करामात बताई...

गुणातीत समाज के ऐसे प्रेरक, प्रवर्तक, प्रणेता एवं प्राणाधार **गुरुहरि काकाजी महाराज का 12 जून को जब प्राकट्य दिन** आ रहा है, तब – हम सबकी परवरिश हेतु उन्होंने जो उद्यम किया, उसका मोल समझ कर, गद्गद् हृदय से प्रार्थना करें और जन्मों की जड़ता से मुक्त होने के लिए प्रयास करें... इसी हेतु **'जेवा में निरख्या रे...'** पुस्तक में **अक्षरनिवासी पू. कोठारीस्वामीजी** (हरिधाम) द्वारा निम्नलिखित स्वानुभावों का पठन करके, अपने भीतर टटोलें कि समय-समय पर गुरुहरि काकाजी महाराज ने हमारा भी किस प्रकार जतन किया और आज भी प्रत्यक्ष स्वरूप कैसे तत्पर हैं...

आज्ञा से अधिक अनुवृत्ति होती है

प.पू. योगीबापा ने सौराष्ट्र-राजस्थान की तीर्थयात्रा की स्पेशियल ट्रेन का आयोजन किया था। हरिभक्तों को सभी तीर्थों के दर्शन का लाभ मिले, इस हेतु योगीबापा अकसर ऐसी स्पेशियल ट्रेन आयोजित करते थे। इस ट्रेन में प.पू. काकाजी भी थे। मैं उस समय युवक-सेवक के रूप में सेवारत था। ट्रेन में हरिभक्तों को बापा की कथावार्ता, दर्शन, सेवा का अखंड लाभ मिलता। सौराष्ट्र के तीर्थों का दर्शन करते हुए, गाड़ी राजस्थान की ओर बढ़ रही थी। पूरी रात सफ़र करने के बाद गाड़ी सुबह राजस्थान के एक छोटे स्टेशन पर आ पहुँची। सुबह का समय था, अतः सबसे पहला कार्य तो नहाने-धोने और प्रातःकर्म पूरा करने का था। स्पेशियल ट्रेन होने के कारण समय की कोई पाबंदी तो थी नहीं। एक वडील ने सूचना दी – *'सभी हरिभक्तों को स्टेशन पर ही स्नान करना है। केवल बड़े हरिभक्त ही गाँव में जाकर स्नान करेंगे। सो, बड़ों के सिवा अन्य किसी को गाँव में जाना नहीं है।'* मैंने यह सूचना सुनी और ये शब्द मेरे दिमाग़ में बैठ गए। सभी बड़ों के साथ काकाजी स्नान करने जाने लगे। सेवा हेतु उन्होंने मुझे अपने साथ चलने के लिए कहा। लेकिन, दी गई सूचना के शब्दों के कारण कहो या किसी सात्त्विक प्रकृति के कारण मैं काकाजी के साथ नहीं गया। काकाजी तो चले गए और मैंने भी स्टेशन पर ही स्नान कर लिया। थोड़े समय के बाद गाँव में स्नान करके काकाजी स्टेशन लौटे। मैं गाड़ी के डिब्बे के पास ही खड़ा था। मुझे देख कर काकाजी ने मार्मिक टकोर करते हुए कहा – *'मुर्गे की बाँग के बिना सुबह नहीं होती क्या?'* यूँ कह कर हँसते-

हँसते चल दिए। तब मुझे मेरी भूल का ख्याल आया और काकाजी का जो वचन स्वीकार न कर सका, उसका बेहद खेद हुआ। **हम में रही हुई सात्त्विक प्रकृति बड़े पुरुष के वचन का पालन करने में बाधित हो सकती है,** उसका मुझे पहली बार दर्शन हुआ। उस समय मुझे ऐसा तनिक भी ख्याल नहीं था कि **बड़े पुरुष के वचन की अपेक्षा अन्य सभी बातें गौण हो जाती हैं।**

गुणातीत के सेवक की रीति

प.पू. योगीबापा ने सौराष्ट्र की पंचतीर्थी का दृढ़ संकल्प किया था। कई भक्त आने वाले थे। अतः कुछ बड़े हरिभक्त बापा को सलाह-सूचन देने लगे कि इतने सारे हरिभक्तों के लिए बस की सुविधा किस प्रकार हो सकेगी ? प.पू. काकाजी ने यह दायित्व उठा लिया। योगीबापा के अभिप्राय की भक्ति में जुड़ कर बसों की व्यवस्था की। प्रत्येक बस में एक-एक बड़े हरिभक्त को इन्चार्ज के रूप में नियुक्त कर दिया; ताकि वे अपनी बस के भक्तों को ढूँढ-ढूँढ कर समयानुसार बस में बिठा दें। इस प्रकार सभी बसें चल पड़ीं। पंचतीर्थी की यात्रा करते-करते हम सभी मांगरोल पहुँचे। वहाँ सभी आराम करने के लिए उतरे। काकाजी ठहरने की जगह पर पधारे। सो, मैंने एक बहुत अच्छा नारियल तोड़ कर उसका पानी काकाजी को दिया। नारियल का पानी पीते-पीते काकाजी ने कहा–

'बापा का संकल्प था, तो उनके आशीर्वाद से सारी व्यवस्था कितनी अच्छी हो गई। हमें तो केवल बापा के वचन में जुड़ जाना ही है। बाकी सब कुछ वे ही करने वाले हैं और कर रहे हैं।' तब मेरे मुँह से निकल गया–

'काकाजी ! आपने ऐसी व्यवस्था की है कि जो बड़े ना-नुकर कर रहे थे, उन सबकी बोलती बंद हो गई !'

तब नारियल पानी पीते-पीते काकाजी ने मेरी ओर खूब कड़ी नज़र से देख कर कहा–

'तू ऐसा बोलता है ?'

यूँ, **किसी की भी निंदा करना काकाजी को तनिक भी पसंद नहीं था।**

'छोटों को बड़ों का मान रखना चाहिए, उनके प्रति किसी भी प्रकार का अभिप्राय नहीं देना चाहिए। केवल अपनी तरफ ही दृष्टि होनी चाहिए। हरेक के गुणगान के सिवा कोई विचार मन में उठना नहीं चाहिए।' ऐसा गुणातीत ज्ञान और सच्चे सेवक की रीति-नीति की सूझ काकाजी ने अंतिम क्षणों तक हमें दी है।

स्वामीसेवकभाव

हम साधु बनने वाले थे, उससे पहले प.पू. योगीबापा के साथ विचरण में घूमते थे। साधु बनने के दिन जैसे-जैसे नज़दीक आते थे, वैसे-वैसे साधु होने वाले सभी युवकों को बापा अंतिम बार घर जाकर मिल कर आने की आज्ञा देते थे। बापा की आज्ञा लेकर एक के बाद एक युवक घर जा रहे थे। मैं भी बापा के पास घर जाने की आज्ञा लेने के लिए गया। तो **बापा ने कहा– *'तुम्हें दादुभाई जब कहें, तब घर जाना।'***

काकाजी जब मंदिर पधारे, तो मैं घर जाने के लिए काकाजी से आज्ञा लेने गया।

काकाजी ने कहा– *'बापा जैसा कहें, हमें वैसा करना है। वे तो सूर्य हैं। हम तो तारे जैसे कहे जाएँ।'*
यूँ थोड़े दिन तक ऐसी लीला चली। मैं बापा के पास जाता, तो बापा काकाजी के पास भेजते और जब काकाजी के पास जाता, तो काकाजी बापा के पास भेजते।

एक दिन अमदावाद मंदिर में रात के बारह बजे बापा ने मुझसे पूछा– *'तुम्हें घर नहीं जाना ?'* तब मैंने कहा– *'बापा अब आप और दादुभाई इकट्ठे होकर निर्णय दें, तो संभव है।'*

फिर **बापा ने रात को 12 बजे काकाजी से कहा– *'इसे घर कब भेजना है ?'***

तब **काकाजी ने कहा– *'आप मालिक हैं, आप कहेंगे तब जाएगा।'***

फिर दूसरे दिन बापा ने मुझे घर जाने की आज्ञा दी।

यूँ, **बापा के कहने के बावजूद भी काकाजी ने स्वतंत्र निर्णय नहीं लिया और केवल बापा की आज्ञा का ही सेवन करने का आग्रह किया। कैसा अनुपम स्वामीसेवकभाव !**

स्वधर्म की स्पष्टता

दिनाँक 21.1.61 की वसंतपंचमी को हम दस मुक्तों को प.पू. योगीबापा ने साधु की दीक्षा दी। दीक्षा लेने से पहले प.पू. अक्षरविहारीस्वामी, पू. ज्ञानस्वरूपस्वामी इत्यादि हम सभी मुंबई में प.पू. काकाजी की कथावार्ता और समागम का लाभ ले रहे थे।

दि. 19.1.61 की सायं **काकाजी** ने मुझे अपने कमरे में बुलाया और दीक्षा लेने से पहले अंतिम आदेश कहो या आध्यात्मिक सूझ देते हुए कहा–

***'अब तुम साधु होने वाले हो, अब तुम्हारा आश्रम बदल जाएगा।' सो, पू. महंतस्वामी को आगे रख कर काम करना, उनकी आज्ञा में निरंतर वर्तना। वे राज़ी हों इस प्रकार वर्तना। उनकी मरज़ी के अनुसार ही जीवन होना चाहिए, वे कदापि विवश न हों ऐसा जीवन जीना। उनके अंतर की प्रसन्नता प्राप्त होगी, तो योगीबापा की माला के मनके में आ जाओगे - उनकी प्रसन्नता तुम पर अखंड रहेगी।'* फिर बोले– *'कभी भी ख़ाली नहीं रहना'* ये दो आज्ञा देकर आशीर्वाद दिया।**

यूँ, काकाजी के साथ मुझे पहले से ही अत्यंत प्रीति थी, फिर भी त्यागाश्रम में मेरा स्वधर्म क्या होना चाहिए, उसकी स्पष्ट सूझ दी और साथ ही साथ मेरे जीवन के प्रत्येक पल का सदुपयोग हो, उस हेतु सूचन किया, वह **उनकी** मुझ पर कैसी **निरपेक्ष करूणा** !

तेरी जिम्मेदारी मेरी

हम सभी संत दादर अक्षरमंदिर में थे। तब प.पू. काकाजी वहाँ कथावार्ता का लाभ देने के लिए पधारते थे। कथावार्ता के पश्चात् जिस-जिसको किसी भी प्रकार की परेशानी होती, उन सभी से वे निजी तौर पर मिल कर समाधान देते। काकाजी जब पधारते, तब उनसे मिलने के लिए संत अपने नाम मुझे लिख कर दे जाते। खानगी

करने के लिए मैं काकाजी के लिए एक जगह व्यवस्थित आसन बना देता। वहाँ सभी संत एक के बाद एक काकाजी से मिलते और अपने मन की बात करते। काकाजी सभी की बात बहुत प्रेम और धीरज से सुन कर, सभी की उदासी टाल कर, सभी को हल्के फूल बना कर आनंद प्रगटा देते, सबको आनंदित कर देते।

एक बार खानगी करने के लिए दादर मंदिर की नई सीढ़ियों के नीचे जो जगह बनाई थी, वहाँ काकाजी विराजित हुए थे। सभी संत बारी-बारी से काकाजी से मिलने आए। सभी की खानगी पूरी होने के बाद, मैं एक छोटी थाली में मूली और भुने हुए चने लेकर काकाजी के पास गया।

काकाजी ने पूछा– *'अब कोई संत बाकी है ?'*

मैंने कहा– *'मैं हूँ।'*

यूँ कह कर मैं मेरी बात करने जाऊँ कि काकाजी ने मुझे मूली और चने का प्रसाद दिया और... *'चलो, खाओ'* कहते हुए वे आसन से उठ गए और मुझे ऊपर के कमरे में योगीबापा की मूर्ति के पास ले गए। बापा की मूर्ति के सामने उंगली से इशारा करते हुए मुझसे कहा– *'आज से तुम्हारी जिम्मेदारी मेरी।'*

ऐसा कह कर कमरे से बाहर निकल कर मोजड़ी पहनी और आगे जाते हुए दोबारा बोले– *'आज से तेरी जवाबदारी मेरी।'*

अंत में तो सीढ़ियाँ उतरते हुए हाथ ऊँचा करके कहा– *'आज से तुम्हारी जिम्मेदारी मेरी।'*

इस प्रकार, तीन बार आशीर्वाद देकर **खूब करुणा बरसाई।**

उस दिन से मेरा साधना मार्ग खूब सरल बन गया। **कैसी भी उदासी आती, तब एक ही विचार करता कि 'मेरी जिम्मेदारी किसने ली है!' और तुरंत ही आनंदविभोर हो जाता हूँ, निश्चिंत और हल्का फूल हो जाता हूँ।**

जोगी का झमूरा

राजपुर गाँव में पारायण रखी थी, तब का यह प्रसंग है। व्यासपीठ पर वहाँ के चार महानुभावों के साथ प.पू. योगीबापा का अच्छा आसन बनाया था।

एक दिन पहले से योगीबापा बोलते रहते थे– *दादुभाई आएँगे, फिर मज़ा आएगा।*

प.पू. काकाजी पधारे और दादर मंदिर के कोठारी **पू. भक्तिप्रियस्वामी के पूर्वाश्रम के घर पर** अपना बैग रखने गए।

योगीबापा तब स्नान करने की तैयारी कर रहे थे। किसी हरिभक्त ने बापा को खबर दी– *दादुभाई, आ गए हैं।* **जब तक काकाजी नहीं आए, तब तक योगीबापा स्नान किए बिना बैठे रहे।** सभी ने कहा भी– *दादुभाई आएँ उससे पहले आप स्नान कर लिजिए।* लेकिन बापा माने ही नहीं। आख़िर **जब काकाजी पधारे तब बापा ने उन्हें गले लगाया।**

सुबह पारायण में सभी के आसन लगाए गए थे। योगीबापा ने कहा– *'दादुभाई बातें करिए।'* काकाजी, बापा के चरण स्पर्श करने के लिए गए।

तब **बापा ने कहा– *'गुरु! जैसी है, वैसी बात करना।'***

काकाजी पल में बापा का मर्म समझ गए। फिर काकाजी ने योगीजी महाराज की खूब महिमा गाते हुए कहा– *'...कोटि रवि चंद्रनी कांति झांखी करे, एवा तारा उर विषे नाथ भासे...' ऐसे ये योगीबापा हैं। ऐसा उनका दर्शन है। अक्षरधाम में जो महाराज हैं, उनमें और इनमें रंचमात्र फर्क़ नहीं है। मुझे 1952 में उन्होंने जो साक्षात्कार कराया है, उसका मुझे दर्शन है। इसलिए बात कर रहा हूँ।* ***ये योगीबापा तो पूर्णतः महाराज को धारण किए हुए हैं। अति समर्थ होने के बावजूद वे सामान्य बन कर रहे हैं।*** *हमें तो ताँगे और बैलगाड़ी जैसा सुख दिया है, उसी से फलेफूले रहते हैं, जबकि ये पुरुष तो* ***रंक से भी रंक बन कर जीते हैं।***

इस प्रकार काकाजी ने बापा की अपरंपार महिमा गाई। तत्पश्चात् अन्य सभा हुई और मंच पर केवल योगीबापा का ही आसन रहा। कहे जाते महानुभाव बापा के सामने-नीचे गद्दे पर बैठ गए थे।

यूँ **बापा का यथार्थ स्वरूप पहचान कर सभी को सच्चा स्वरूप दर्शन करवाने में काकाजी का अप्रतिम और अजोड़ योगदान है।**

आधार केवल प्रभु का!

सांकरदा मंदिर का निर्माण हुआ, तब का एक प्रसंग है। वह मंदिर बहुत कठिन परिस्थितियों में निर्मित हुआ था। तब विरोध भी बहुत था। मुट्ठीभर हरिभक्त थे, जिन्होंने मंदिर के निर्माण कार्य में सर्व प्रकार से सेवा दी। जितने खर्च का अनुमान लगाया था, उससे अधिक हुआ। इसलिए मुंबई के हरिभक्तों से लेकर, ठाकुरजी के लिए लिया गया कर्ज़ पूरा किया। एक दिन प.पू. काकाजी सांकरदा पधारे थे। हम सभी संत सेवा कर रहे थे, वातावरण आनंदमय था। तब काकाजी ने कहा– *'हम पर कर्ज़ बाकी है।'*

तब मैंने सहज ही कहा– *'काकाजी! मुक्तों के घर बेटे नहीं हैं, उन्हें आप बेटा होने का आशीर्वाद देंगे, तो वे सेवा देंगे।'*

यह सुनते ही **काकाजी** का मुखारविंद बदल गया और मुझसे **कहा– *'पुरुषोत्तमदास! तू ऐसा कहता है?'***

आनंद का वातावरण एकदम गमगीन हो गया। हम सभी चुप हो गए। 10-15 मिनिट तक काकाजी कुछ बोले नहीं।

फिर दोबारा मेरे सामने देख कर वही वाक्य दोहराया– ***'पुरुषोत्तमदास! तू ऐसा बोला?'***

मुझे मेरी भूल समझ आ गई।

काकाजी अति समर्थ थे, फिर भी भगवान के सिवा उन्होंने जीवन में अन्य कोई आधार नहीं लिया। केवल प्रभु का ही आधार! प्रभु के बल से वे जिए हैं। अति समर्थ होते हुए भी कैसी भी परिस्थिति में उन्होंने धुन, भजन, प्रार्थना करके प्रभु का ही बल लिया है और सब को उसके मुताब़िक जीवन जीने का आग्रह किया है।

अजोड़ सर्वदेशीयता

'भक्तों के गुणगान गाने से जीव ब्रह्मरूप हो जाता है।' यह वाक्य साकार करने के लिए बड़े पुरुषों ने जन्मदिन मनाने की एक रीति प्रवर्तायी है। हम सभी संत सोखड़ा के पुराने मंदिर में रहते थे, वहाँ का यह प्रसंग है। जब जिस संत का जन्मदिन होता, उसे एक कार्ड अर्पित किया जाता।

एक दिन **पू. माधवजीवनस्वामी** का जन्मदिन था। उन्हें टॅपरॅकॉर्डर का बहुत शौक़ था और तब वे उस डिपार्टमेन्ट को संभालते भी थे। इसलिए संतों ने उनके लिए स्पूल के आकार का कार्ड बनाया था। कार्ड में अक्षरपुरुषोत्तम महाराज, शास्त्रीजी महाराज, योगीजी महाराज, काकाजी और स्वामीजी की मूर्ति लगाई थी। पप्पाजी की मूर्ति लगाने की जगह नहीं थी, इसलिए उनकी मूर्ति नहीं रखी गई थी।

गुरुजी ने भी तब कहा था– ***पप्पाजी ऐसे हैं कि इससे इन्हें कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता।***

पर, **काकाजी** को जब वह कार्ड हमने दिखाया, तो काकाजी ने प्रसन्नता नहीं बताई और कहा– ***'तुम में सर्वदेशीयता नहीं है। पप्पाजी की मूर्ति क्यों नहीं लगाई?'*** संतों ने कहा– *'जगह नहीं थी, इसलिए नहीं लगाई।'* तब काकाजी ने कहा– *'यदि जगह नहीं थी, तो दूसरी मूर्तियों को छोटा-छोटा बनाना था।'* ऐसा कह कर अपनी नाराज़गी व्यक्त की।

सर्वदेशीय पुरुष काकाजी की अजोड़ सर्वदेशीयता का कैसा अद्‌भुत दर्शन!

तू भी सूर्य

हरिधाम में गुणातीत द्विशताब्दी महोत्सव मनाया गया। प.पू. काकाजी हरिधाम पधारे थे। दिनाँक 25 जनवरी 1986 की सुबह काकाजी, ठाकुरजी का दर्शन करने हेतु पधारे। दर्शन करके काकाजी मंदिर की सीढ़ियाँ उतर रहे थे।

मैं और पू. मुकुंदजीवनस्वामी दोनों काकाजी के पीछे-पीछे चल रहे थे। सूर्यदेव भी प्रगट हो चुके थे। थोड़ी देर खड़े रह कर **काकाजी** ने सूर्य की ओर अंगुली निर्देश करके मुझे कहा–

'वो आकाश का सूर्य, यहाँ धरती पर मैं सूर्य' और फिर मेरी छाती पर हाथ फेर कर कहा– 'तुम्हारे भीतर भी सूर्य; जाओ आज से तीनों एक।'

फिर मुकुंदजीवनस्वामी की भी छाती पर हाथ फेर कर कहा–

'वो आकाश का सूर्य; यहाँ मैं सूर्य और तुम्हारे भीतर भी सूर्य, जाओ आज से तीनों एक।'

प.पू. पप्पाजी ने इस प्रसंग का मर्म स्पष्ट करते हुए बाद में गुरुजी को बताया था–

'काकाजी ने तुम पर यूँ 'शक्तिपात' किया था!'

योगीबापा रूपी सूर्य को भीतर में प्रगटा कर-स्वयं सूर्य बन कर, सभी को सूर्य स्वरूप बनाने वाले काकाजी कैसे समर्थ होंगे?

भजन

(राग–उंगली पकड़ के तूने चलना सिखाया था ना...)

मुक्तों की महिमा जानूं, उनको सच्चे सगे दिल से मानूं...-2
मुक्तों की महिमा जानूं...

चौखट तो घर-जगत की, तेरे प्रेम ने पार करा दी,
दहलीज़ मन-स्वभावों की पार न होती,
प्रभु का ही बल जो होगा, दृढ़ निश्चय 'गर होगा,
दहलीज़ कैसी भी हो, पार तो होगी, हुं... हुं.... हुं... हुं....हुं....
किसी भी ख्यालों में न जा, मन मेरे, किसी भी ख्यालों में न जा,
काकाजी हर पल संग तेरे, संग तेरे काकाजी हर पल संग तेरे...

संबंध की महिमा पक्की होती नहीं है, प्रसंग पे निर्दोषबुद्धि रहती नहीं है,
हो... धाम के कुटुंबी सारे माने न जाते, संत की प्रसन्नता को हम, यूं ही खो देते,
खुद में ही डूबे रह कर, मन से ही यारी रख कर
दहलीज़ मन-स्वभावों की पार न होगी
भक्तों से दूरी रख के, उनकी उपेक्षा करके,
दहलीज़ मन-स्वभावों की पार न होगी
ऐसी चिंता में रहे डूबा, मन मेरा,
इन्हीं विचारों में डूबा, मन मेरा,
ऐसी चिंता में रहे डूबा, मन मेरा,
इन्हीं विचारों में डूबा...

मेरे दिलबरो... धुन जब करोगे रो-रो के,
मेरे दिलबरो... गाँठे गलेंगी मन की,
राज़ी काका होंगे तुमसे,
मेरी प्रसन्नता मिले, प्रसन्नता मेरी मिले,

रस्ता बता के प्रभु ने, लक्ष जो बताया है ना,
दहलीज़ अब हर कोई पार ही होगी,
धुन का ही बल लेकर, दृढ़ आसरा रख कर,
दहलीज़ अब हर कोई पार ही होगी,
मिथ्या विचारों में न जा, मन मेरे, मिथ्या विचारों में न जा,
काकाजी हर पल संग तेरे, संग तेरे काकाजी हर पल संग तेरे...
मुक्तों की महिमा जानूं, उनको सच्चे सगे दिल से मानूं... मुक्तों की महिमा जानूं...
काकाजी हर पल संग मेरे, संग मेरे काकाजी हर पल संग मेरे...

निमंत्रण

आइए, 12 जून 2019, बुधवार सायं 6:30 से रात्रि 9:15
प.पू. गुरुजी की निश्रा में – गुरुहरि काकाजी महाराज के 101वें प्राकट्योत्सव
एवं 'अनुष्ठान शिविर' की पूर्णाहुति के निमित्त
'ताड़देव'–अशोकविहार, श्री अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण मंदिर में
इष्ट मित्रमण्डली सहित उपस्थित रह कर
दर्शन, सेवा, समागम और **आमरस के प्रसाद** का लाभ लेकर स्वयं को धन्य करें...

व्रतोत्सवसूची

(1)	दि.	7.5.'19,	मंगलवार	–	**अखात्रीज**
(2)	दि.	8.5.'19,	बुधवार	–	शास्त्रीजी महाराज की अंतर्धान तिथि
(3)	दि.	12.5.'19,	रविवार	–	**'अनुष्ठान शिविर'** का **आरंभ** (सायं 7:00 से 9:00)
(4)	दि.	15.5.'19,	बुधवार	–	एकादशी, व्रत
(5)	दि.	17.5.'19,	शुक्रवार	–	नृसिंह जयंती
(6)	दि.	18.5.'19,	शनिवार	–	बुद्ध पूर्णिमा
(7)	दि.	23.5.'19,	गुरुवार	–	**ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज** एवं **प्रगट ब्रह्मस्वरूप हरिप्रसादस्वामीजी का प्राकट्य दिन**
(8)	दि.	30.5.'19,	गुरुवार	–	एकादशी, व्रत
(9)	दि.	31.5.'19,	शुक्रवार	–	**गुरुहरि योगीजी महाराज की जयंती** **प.पू. गुरुजी की भागवती दीक्षा तिथि**
(10)	दि.	1.6.'19,	शनिवार	–	**गुरुहरि पप्पाजी का दृष्टा दिन एवं गुणातीत ज्योत स्थापना दिन**
(11)	दि.	12.6.'19,	बुधवार	–	भगवान स्वामिनारायण की स्वधामगमन तिथि **गुरुहरि काकाजी महाराज का प्राकट्योत्सव** **एवं 'अनुष्ठान शिविर' की पूर्णाहुति** *(सायं 6:30 से 9:15 मनाएँगे।)*
(12)	दि.	13.6.'19,	गुरुवार	–	भीम एकादशी, व्रत
(13)	दि.	16.6.'19,	रविवार	–	वटसावित्री
(14)	दि.	29.6.'19,	शनिवार	–	एकादशी, व्रत
(15)	दि.	4.7.'19,	गुरुवार	–	रथयात्रा
(16)	दि.	12.7.'19,	शुक्रवार	–	**देवशयनी एकादशी, व्रत–चातुर्मास प्रारंभ**
(17)	दि.	16.7.'19,	मंगलवार	–	**गुरुपूर्णिमा**

Air Mail
R.N.I. 28971/ 77
'Bhagwatkripa' Bimonthly Magazine – Despatched Bimonthly
If undelivered please return to :— *Printer, Publisher, Editor :-*
SHRI PRABHAKER RAO *FOR* YOGI DIVINE SOCIETY- DELHI
'Taad-dev', Kākāji Lane, Swāminārāyan Mārg, Ashok Vihār-III, Delhi-110 052 (India) Tel.: 2730 1327
Printed at : **D.K. FINE ART PRESS (P) LTD.,** A 6, Community Centre, Nimri Colony, DELHI-110 05